साप्ताहिक
Live not just breaTHE

दि कार्मिक पोस्ट

MPHIN/2015/63220
MP/IDC1528/22-23

Global School Of Excellence, Obedullaganj

वर्ष : 9, अंक : 49 (प्रति बुधवार), इन्दौर, 24 जुलाई 2024 से 30 जुलाई 2024 पेज : 8 कीमत : 3 रुपये

बजट 2024-25- जैव विविधता योजना के प्रति केंद्र की प्रतिबद्धता पर लगा सवालिया निशान

केंद्र सरकार समय-समय पर दावे करती रही है कि वह जैव विविधता योजना को तय समय पर पूरी कर देगी, बावजूद इसके इस वर्ष के आम बजट (2024-25) में जैव विविधता के प्रमुख क्षेत्रों के लिए आवंटन कम कर दिया गया है। इस योजना को दिसंबर 2022 में मॉन्ट्रियल में कॉप15 में अपनाया गया था और भारत ने इसका पूरा समर्थन किया था।

केंद्रीय पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के पास जैव विविधता संरक्षण (जिसमें वनस्पतियों, जीवों, वनों और वन्यजीवों के संरक्षण और सर्वेक्षण के व्यापक दायरे में; प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण; वनीकरण और क्षरित क्षेत्रों का सुधार; पर्यावरण की सुरक्ष; और जानवरों के कल्याण को सुनिश्चित करना शामिल है) की जिम्मेवारी है। इस मंत्रालय का आवंटन 2023-24 में 3,079.4 करोड़ रुपये से बढ़कर 2024-25 में 3,330.37 करोड़ रुपए हो गया है। हालांकि, इसके भीतर, जैव विविधता से जुड़े कार्यों के लिए आवंटित खर्च कम हो गया है। बजट 2024-25ः हिमाचल, बिहार, आंध्र प्रदेश व 100 शहरों के लिए की गई घोषणा कहीं बाजीगरी तो नहीं? मंत्रालय के अधीन काम कर रहे राष्ट्रीय जैव विविधता प्राधिकरण (एनबीए) का बजट 16.4 करोड़ रुपए से घटाकर 16 करोड़ रुपए कर दिया गया है। एनबीए की स्थापना 2003 में केंद्र सरकार द्वारा भारत के जैविक विविधता अधिनियम (2002) को लागू करने के लिए की गई थी। हाल ही में इसमें संशोधन किया गया था और संशोधित कार्य योजना को लागू करने के लिए कम से कम शुरुआती चरण में अधिक धन की आवश्यकता होगी। समग्र जैव विविधता संरक्षण के बजाय प्रजातियों के संरक्षण के लिए उपलब्ध धन में वृद्धि हुई है। उदाहरण के लिए, राष्ट्रीय बाघ संरक्षण प्राधिकरण के लिए उपलब्ध धन पिछले साल के 11 करोड़ रुपए से बढ़कर इस साल 35 करोड़ रुपए हो गया है। यह प्राधिकरण केवल एक ही प्रजाति का प्रभारी है। शोध करने में शामिल स्वायत्त निकायों के मामले में कुल धनराशि 309 करोड़ रुपए से बढ़कर 391 करोड़ रुपए हो गई है, लेकिन वन प्रबंधन के लिए धनराशि में कटौती की गई है। भारतीय वन प्रबंधन संस्थान का आवंटन 17.5 करोड़ रुपए से घटकर सिर्फ 13 करोड़ रुपए रह गया है। केंद्र प्रायोजित योजनाओं के लिए कुल आवंटन 3,079.4 करोड़ रुपए से बढ़कर 3,330.37 करोड़ रुपए हो गया है। लेकिन पर्यावरण, वानिकी और वन्यजीव जैसी विशिष्ट केंद्र प्रायोजित योजनाओं के बजट में कटौती की गई है। यह पिछले साल के 758.8 करोड़ रुपए से घटकर इस साल 713.5 करोड़ रुपए रह गया है। प्राकृतिक संसाधनों और पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण जैसे विशिष्ट कार्यक्रमों में भी बजट में कटौती देखी गई। वर्ष 2023-24 में इसके लिए 47 करोड़ रुपए आवंटित किए गए थे। लेकिन इस वर्ष आवंटन मात्र 43.5 करोड़ रुपए रहा। जैव विविधता संरक्षण के लिए पहले मात्र 7 करोड़ रुपए मिलते थे, जो अब घटकर 5 करोड़ रुपए रह गए हैं। जलीय पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण के लिए आवंटन 38.4 करोड़ रुपए से घटकर 35.5 करोड़ रुपए रह गया है, जबकि बाह्य सहायता प्राप्त परियोजनाओं के लिए आवंटन 1.6 करोड़ रुपए से बढ़कर 3 करोड़ रुपए हो गया है। जैव विविधता योजना में एक वित्तपोषण घटक है, जिसके तहत विकसित देशों को योजना के तहत निर्धारित 23 लक्ष्यों और 4 लक्ष्यों को पूरा करने के लिए विकासशील देशों के प्रयासों में सहायता प्रदान करना अनिवार्य है। हालांकि, अभी तक वित्तपोषण बहुत कम हुआ है और जैव विविधता की रक्षा का दायित्व राष्ट्रीय सरकारों पर है। इस दृष्टि से, इस वर्ष का केंद्रीय बजट भारत की जैव विविधता के लिए शुभ संकेत नहीं है।

जंगलों पर लगातार बढ़ रहा दबाव, तीन दशकों में 42 करोड़ हेक्टेयर वन क्षेत्र का हुआ डायवर्जन

न्यूयार्क। क्या आप जानते हैं कि पिछले तीन दशकों में करीब 42 करोड़ हेक्टेयर वन भूमि का अन्य उपयोग के लिए डायवर्जन किया गया है। मतलब कि जिन क्षेत्रों पर कभी जंगल मौजूद थे, उनका उपयोग अब कृषि, खनन, शहरीकरण जैसे दूसरे कामों के लिए किया जा रहा है। यह खुलासा संयुक्त राष्ट्र खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) ने अपनी नई रिपोर्ट द स्टेट ऑफ वर्ल्डस फॉरेस्ट्स 2024 में किया है। हालांकि यदि इन तीन दशकों में वन विनाश की दर को देखें को देखें तो उसमें गिरावट की प्रवत्ति देखी गई है। गौरतलब है कि जहां 1990 से 2000 के बीच सालाना 1.58 करोड़ हेक्टेयर प्रतिवर्ष की दर से जंगलों को काटा जा रहा था, वहीं विनाश की यह दर 2015 से 2020 के बीच घटकर सालाना 1.02 करोड़ हेक्टयर रह गई है।

इस गिरावट के बावजूद अभी भी बड़े पैमाने पर जंगलों को काटा जा रहा है। 2015 से 2020 के आंकड़ों पर गौर करें तो जहां अफ्रीका में सालाना 44.1 लाख हेक्टेयर में फैले जंगलों को साफ किया गया। वहीं दक्षिण अमेरिका में यह आंकड़ा 29.5 लाख जबकि एशिया में यह आंकड़ा 22.4 लाख हेक्टेयर प्रतिवर्ष दर्ज किया गया। 2020 में किए रिमोट सेंसिंग सर्वे ने भी पुष्टि की है कि वैश्विक स्तर पर वन विनाश की दर में गिरावट की प्रवत्ति जारी है। देखा जाए तो समय के साथ वन क्षेत्र में बदलाव दो मुख्य कारणों से होता है, पहला वनों के किए जा रहे विनाश और दूसरा उन क्षेत्रों में वनों का विस्तार है, जहां पहले वन क्षेत्र की जगह दूसरी गतिविधियां की जाती थी। वैश्विक स्तर पर देखें तो 2010 से 2020 के बीच सालाना वन क्षेत्र में 47 लाख हेक्टेयर की दर से शुद्ध गिरावट आई है। मतलब की यह जंगल अपने बढ़ने की दर से कहीं ज्यादा तेजी से सिकुड़ रहे हैं। हालांकि वन क्षेत्र में आती गिरावट की दर पहले जितनी नहीं है। आंकड़ों के मुताबिक जहां 1990 से 2000 के बीच वन क्षेत्र को सालाना 78 लाख हेक्टेयर की दर से नुकसान हो रहा था, वो 2000 से 2010 के बीच घटकर 52 लाख हेक्टेयर प्रति वर्ष रह गया। 2020 के आंकड़ों के मुताबिक दुनिया के करीब 31 फीसदी भूभाग यानी करीब 410 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र पर जंगल मौजूद हैं। पिछले दशक के आंकड़ों पर नजर डाले तो दुनिया के कई देश ऐसे भी हैं, जिन्होंने वन विनाश को रोकने में महत्वपूर्ण सफलता हासिल की है। गौरतलब है कि इन देशों में भारत भी शामिल है। रिपोर्ट ने पुष्टि की है कि जहां 2010 से 2020 के बीच चीन के वन क्षेत्र में सालाना 19,37,000 हेक्टेयर की दर से इजाफा हुआ है। वहीं ऑस्ट्रेलिया इस मामले में दूसरे स्थान पर हैं जहां इस दौरान वन क्षेत्र में प्रति वर्ष 446,000 हेक्टेयर की दर से बढ़ोतरी हुई है। वहीं 266,000 हेक्टेयर प्रति वर्ष के साथ भारत तीसरे और 149,000 हेक्टेयर प्रति वर्ष के साथ चिली चौथे स्थान पर है। हैरानी की बात है कि सालाना 108,000 हेक्टेयर के शुद्ध इजाफे के साथ अमेरिका इन देशों में सातवें स्थान पर है। इंडोनेशिया से जुड़े आंकड़ों को देखें तो वहां 2020-2021 की तुलना में 2021-2022 के दौरान वनों के हो रहे विनाश में 8.4 फीसदी की उल्लेखनीय कमी आई है। 1990 में पर्यावरण और वानिकी मंत्रालय द्वारा इस पर नजर रखे जाने के बाद से यह इंडोनेशिया में दर्ज की गई वन विनाश की सबसे कम दर है। ऐसा ही कुछ ब्राजील के अमेजन क्षेत्र में भी देखने को मिला है, जहां 2022 की तुलना में वन विनाश में 50 फीसदी की गिरावट आई है। बता दें कि अमेजन देश के कुल क्षेत्रफल का करीब 60 फीसदी हिस्सा है। वैश्विक स्तर पर देखें तो जंगलों को केवल इंसानों द्वारा काटे जाने का ही खतरा नहीं है। जैसे-जैसे जलवायु में आते बदलाव दुनिया भर में हावी होते जा रहे हैं, उनका प्रभाव जंगलों पर भी स्पष्ट तौर पर देखा जा सकता है। बढ़ते तापमान की वजह से जहां जंगलों में आग लगने का खतरे बढ़ रहा है। साथ ही बदलती जलवायु के साथ जंगल कीटों जैसे तनावों के प्रति कहीं ज्यादा संवेदनशील होते जा रहे हैं।

वन विनाश में दूसरे स्थान पर भारत, पांच वर्षों में खो दिए 668,400 हेक्टेयर में फैले जंगल

रिपोर्ट के मुताबिक जंगल की आग पहले से कहीं ज्यादा तीव्र और गंभीर रूप लेती जा रही है। साथ ही इस तरह की घटनाओं पहले से कहीं ज्यादा बढ़ गई हैं। यहां तक की उन क्षेत्रों में जहां दावाग्नि का खतरा पहले न के बराबर था, वहां भी यह खतरा अब पैर पसारने लगा है। यदि 2023 के आंकड़ों पर नजर डालें तो इसकी वजह से वैश्विक स्तर पर जंगलों में लगी आग की वजह से 6,687 मेगाटन कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन हुआ था। उत्तरी वन क्षेत्रों के जंगलों में लगने वाली आग जहां इस उत्सर्जन में 10 फीसदी का योगदान देती थी। वहीं 2021 में यह उत्सर्जन नए स्तर पर पहुंच गया। इस दौरान देखें तो वैश्विक स्तर पर जंगलों में लगी आग से जितना उत्सर्जन हुआ था, उसमें उत्तर के जंगलों की हिस्सेदारी बढ़कर एक चौथाई पर पहुंच गई। ऐसा मुख्य रूप से लम्बे समय तक चले सूखे और आग लगने की गंभीर घटनाओं के कारण हुआ था।

जलवायु परिवर्तन से बढ़ रहे हैं खतरे, नए क्षेत्रों को भी बना रहे निशाना

जलवायु में आते बदलावों की वजह से जंगल कीटों, बीमारियों और आक्रामक प्रजातियों के प्रति कहीं ज्यादा संवेदनशील हो गए हैं, जो पेड़ों के लिए बड़ा खतरा हैं। पाइन वुड नेमाटोड ने पहले ही कुछ एशियाई देशों में देशी पाइन के जंगलों को भारी नुकसान पहुंचाया है। आशंका है कि 2027 तक, उत्तरी अमेरिका के कुछ हिस्सों में कीटों और बीमारियों से जंगलों को गंभीर नुकसान हो सकता है। देखा जाए तो बढ़ती आबादी और इंसानी महत्वाकांक्षा के चलते वैश्विक स्तर पर लकड़ी उत्पादन रिकॉर्ड स्तर पर बना हुआ है। हालांकि कोरोना महामारी के दौरान इसमें मामूली गिरावट जरूर आई थी, लेकिन इसके बाद, यह उत्पादन वापस सालाना 400 करोड़ क्यूबिक मीटर पर आ गया है।

आवरण कथा- क्या गायब हो गए हैं 2.59 करोड़ हेक्टेयर में फैले जंगल

रिपोर्ट के मुताबिक लकड़ी के अलावा दूसरे उत्पादों के लिए भी इंसान काफी हद इन जंगलों पर निर्भर है। आंकड़ों के मुताबिक दुनिया भर के 600 करोड़ लोग लकड़ी को छोड़ पेड़ों से मिलने वाले अन्य दूसरे उत्पादों पर निर्भर हैं। इनमें 277 करोड़ लोग ग्लोबल साउथ में रह रहे हैं। आपको जानकर हैरानी होगी की कमजोर तबके के करीब 70 फीसदी लोग अपने भोजन, दवा, ऊर्जा और आय के लिए जंगली प्रजातियों पर निर्भर हैं। अनुमान है कि 2020 से 2050 के बीच राउंडवुड की वैश्विक मांग 49 फीसदी तक बढ़ सकती है। यदि भारत से जुड़े आंकड़ों पर गौर करें तो लकड़ी को छोड़ पेड़ों से मिलने वाले अन्य उत्पादों पर करीब 27.5 करोड़ लोगों का जीवन निर्भर है। इन उत्पादों से स्थानीय समुदायों और मूल निवासियों को 40 फीसदी तक आय प्राप्त होती है।

ऐसे में रिपोर्ट में कहा गया है कि सतत विकास की दिशा में प्रगति के लिए वन क्षेत्र में नवाचार आवश्यक है। इनमें उपग्रहों, ड्रोन, रडार और लिडार जैसी उन्नत तकनीकों की मदद से जंगलों की निगरानी और सामने आने वाली चुनौतियां से निपटने के लिए आंकड़े एकत्र करना और उनके विश्लेषण के लिए कृत्रिम बुद्धिमता जैसी उन्नत तकनीकों का उपयोग करना शामिल है। इसी तरह निर्माण क्षेत्र में लकड़ी की जगह दूसरे बेहतर विकल्पों का उपयोग करना शामिल है। इसी तरह स्थानीय समाधानों और नीतियों के विकास में विकास में महिलाओं, युवाओं और स्थानीय समुदायों की हिस्सेदारी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। इसी तरह नवाचार को बढ़ावा देने के लिए स्थानीय परिस्थितियों, दृष्टिकोणों, ज्ञान, आवश्यकताओं और अधिकारों पर विचार करना जरूरी है। रिपोर्ट में वन क्षेत्र में नए विचारों को बढ़ावा देने के लिए पांच तरीके सुझाए गए हैं, इनमें जागरूकता बढ़ना, कौशल और ज्ञान में सुधार करना, साझेदारी को बढ़ावा देना और वित्तपोषण की राह आसान बनाने के साथ ऐसे नियम और नीतियां बनाना जो नए विचारों को प्रोत्साहित करें।

लाड़ली बहनों को 1250 रुपए के अतिरिक्त सावन में पहली अगस्त को मिलेंगे 250 रुपए - मुख्यमंत्री डॉ. यादव

मंत्री सावन में अपने क्षेत्र की लाड़ली बहनों से राखी बंधवाकर मनाएं रक्षाबंधन

श्रावण मास में श्रद्धालुओं के आवागमन और कानून व्यवस्था का विशेष ध्यान रखा जाए

इंदौर मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने कहा है कि भारतीय संस्कृति में सावन माह का विशेष महत्व है। सावन माह में प्रत्येक लाड़ली बहन के खाते में आने वाली एक तारीख को 250 रुपए अंतरित किए जाएंगे, यह राशि प्रतिमाह जारी होने वाली 1250 रुपए की राशि के अतिरिक्त होगी। लाड़ली बहनों को प्रतिमाह जारी होने वाले 1250 रुपए पूर्वानुसार उनके खाते में जारी किए जाएंगे। उन्होंने मंत्रीगण से रक्षाबंधन के पर्व पर अपने-अपने क्षेत्र की लाड़ली बहनों से राखी बंधवाने का आहवान भी किया। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने मंत्रि-परिषद की बैठक से पहले अपने संबोधन में यह बात कही।

मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि भारतीय परंपरा से जुड़े त्योहारों को मनाने का आनंद ही अलग है। इस क्रम में गुरु पूर्णिमा पर स्कूल शिक्षा तथा उच्च शिक्षा विभाग द्वारा सभी शैक्षणिक संस्थानों में गुरुओं के सम्मान के लिए आयोजित कार्यक्रम से प्रदेशवासियों को गुरु परंपरा से जुड़ने का अवसर प्राप्त हुआ है। भारतीय त्यौहार परंपरा सामाजिक उद्देश्यों से जुड़ी है। संक्रांति का पर्व नारी सशक्तिकरण और गुड़ी पड़वा को विक्रमोत्सव के रूप में मनाया गया है। इसी क्रम में सावन मास को बहनों के त्यौहार के रूप में मनाया जाएगा। यह गतिविधियां भारतीय संस्कृति के अनुसार त्यौहार मनाने की परंपरा को बनाए रखने में सहायक होंगी। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि श्रावण मास में मंदिरों में श्रद्धालुओं का आवागमन बढ़ रहा है। सभी मंत्री अपने-अपने क्षेत्र में भक्तों के आवागमन, कानून-व्यवस्था तथा अन्य व्यवस्थाओं पर विशेष ध्यान दें। साथ ही वर्षा काल चलने के कारण नदी व बांधों में बढ़ रहे जल स्तर के संबंध में भी जिला प्रशासन के सतत संपर्क में रहते हुए जागरूक रहे।

महाकौशल में औद्योगिक गतिविधियों और निवेश का परिणाममूलक वातावरण हुआ निर्मित

मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने जबलपुर में हुई रीजनल इंडस्ट्री कान्क्लेव की सफलता के लिए मंत्रि-परिषद के सभी सदस्यों को बधाई दी। लोक निर्माण मंत्री श्री राकेश सिंह ने कहा कि जबलपुर कॉन्क्लेव के सुखद परिणाम सामने आए हैं। निवेशक के साथ हुई सकारात्मक चर्चा से महाकौशल क्षेत्र तथा प्रदेश में औद्योगिक गतिविधियों और निवेश का परिणाममूलक वातावरण निर्मित करने में सफलता मिली है।

राज्य सरकार गौ-पालन को लाभ का धंधा बनाने के लिए प्रतिबद्ध- मुख्यमंत्री डॉ. यादव

गौ-शालाओं की क्षमता बढ़ाने के प्रयास जारी

मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने बुल मदर फार्म का किया निरीक्षण

भोपाल मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने केरवा डेम बुल मदर फार्म का निरीक्षण किया। उन्होंने गायों को हरी घास खिलाई और दुलार भी किया। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि राज्य सरकार गौ-वंश को गौ-शालाओं में रखने का पूरा प्रयास कर रही है। वर्षा काल में कोई भी गौ-वंश सड़कों पर न रहे इसके लिए उन्हें गौ-शालाओं में रखा जा रहा है। गौ-शालाओं की क्षमता भी बढ़ाने के प्रयास जारी हैं। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि किसानों और गौ-पालकों की आय बढ़ाने के प्रयास किये जा रहे हैं। गौ-पालन को लाभ का धंधा बनाने के लिए राज्य सरकार प्रतिबद्ध है। देशी नस्ल को बढ़ावा दिया जा रहा है। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने अधिकारियों को निर्देशित किया कि गौ-वंश को प्रोत्साहन देने के लिए योजना बनाई जाए। उन्होंने दूध पर सब्सिडी देने एवं केंद्र और राज्य शासन की विभिन्न स्कीमों पर चर्चा की। उन्होंने कहा कि गौ-पालकों को लाभान्वित करने के सभी आवश्यक प्रयास किये जाये।

जलवायु परिवर्तन से पृथ्वी के घूमने की रफ्तार में बदलाव, जानें क्या हो सकता है असर

नई दिल्ली एक नए शोध के मुताबिक, शोधकर्ता ने पहली बार एआई का उपयोग करके ध्रुवीय गति के विभिन्न कारणों को पूरी तरह से समझने में सफलता हासिल की है। उनके मॉडल और विश्लेषण से पता चलता है कि जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग का पृथ्वी के घूमने की रफ्तार पर चंद्रमा के प्रभाव से अधिक असर पड़ेगा।

जलवायु परिवर्तन के कारण ग्रीनलैंड और अंटार्कटिका में बर्फ पिघल रहीं हैं। ध्रुवीय क्षेत्रों से पानी दुनिया के महासागरों के जल स्तर में बढ़ोतरी कर रहा है। ईटीएच ज्यूरिख के शोधकर्ता ने शोध के हवाले से बताया कि, बदलाव का अर्थ है कि द्रव्यमान में बदलाव हो रहा है और यह पृथ्वी के घूमने की गति को प्रभावित कर रहा है। शोधकर्ता ने शोध में कहा, भौतिकी में, हम कोणीय गति के संरक्षण के नियम की बात करते हैं और यही नियम पृथ्वी के घूमने को भी नियंत्रित करता है। यदि पृथ्वी अधिक धीमी गति से घूमती है, तो दिन लंबे हो जाते हैं। इसलिए जलवायु परिवर्तन पृथ्वी पर दिन की लंबाई को भी बदल रहा है, हालांकि इसका प्रभाव बहुत कम है। शोध में कहा गया है कि जलवायु परिवर्तन ध्रुवीय गति और दिन की लंबाई को प्रभावित करता है।

जलवायु परिवर्तन चंद्रमा के प्रभाव से भी आगे निकल गया- अध्ययन में, ईटीएच ज्यूरिख के शोधकर्ता बताते हैं कि जलवायु परिवर्तन भी दिन की लंबाई को उसके वर्तमान 86,400 सेकंड से कुछ मिलीसेकंड तक बढ़ा रहा है। ऐसा इसलिए है क्योंकि पानी ध्रुवों से निचले अक्षांशों की ओर बह रहा है और इस प्रकार घूर्णन या घूमने की गति धीमी हो रही है। इस कमी का एक अन्य कारण ज्वारीय घर्षण है, जिसे चंद्रमा द्वारा बढ़ाया जाता है। हालांकि नया अध्ययन इस निष्कर्ष पर आता है- यदि लोग अधिक ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन करना जारी रखते हैं और पृथ्वी उसी के अनुसार गर्म होती है, तो इसका अंततः पृथ्वी की घूमने की गति पर चंद्रमा के प्रभाव की तुलना में अधिक प्रभाव पड़ेगा, जिसने अरबों वर्षों से दिन की लंबाई में वृद्धि निर्धारित की है।

विकासशील देशों पर उत्सर्जन कम करने का असंगत बोझ डाल रहा है कार्बन बॉर्डर एडजस्टमेंट मैकेनिज्म- सीएसई

नई दिल्ली स्थित थिंक टैंक, सेंटर फॉर साइंस एंड एनवायरमेंट (सीएसई) द्वारा आयोजित एक वेबिनार में विशेषज्ञों ने कहा है कि यूरोपियन यूनियन का कार्बन सीमा समायोजन तंत्र यानी कार्बन बॉर्डर एडजस्टमेंट मैकेनिज्म (सीबीएएम) जैसी नीतियां भारी उद्योगों को कार्बन मुक्त करने का बोझ असंगत रूप से ग्लोबल साउथ पर डाल रही हैं। यह बोझ उनके विकास की राह में बाधा डाल रहा है। यहां यह समझना महत्वपूर्ण है कि आखिर यह कार्बन बॉर्डर एडजस्टमेंट मैकेनिज्म (सीबीएएम) क्या है? बता दें कि यूरोपियन यूनियन ने साल 2022 में सीबीएएम की घोषणा की थी। इसके तहत लोहा, इस्पात, सीमेंट, एल्यूमीनियम, उर्वरक, बिजली और हाइड्रोजन जैसे आयातित सामान पर उत्सर्जन के आधार पर कर लगाने की सिफारिश की गई थी।

यह कर इन वस्तुओं के उत्पादन के दौरान होने वाले ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन के आधार पर लगाया जाएगा। इसका सीधा असर उन देशों को होगा जो यूरोप में इन वस्तुओं का निर्यात कर रहे हैं। गौरतलब है कि इस वेबिनार में सीएसई ने एक नई रिपोर्ट भी जारी की है। इस रिपोर्ट में सीबीएएम तंत्र के प्रभावों पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। रिपोर्ट के मुताबिक यूरोपियन यूनियन का यह नया कार्बन बॉर्डर एडजस्टमेंट मैकेनिज्म वैश्विक व्यापार और जलवायु नीतियों में किया एक नया प्रयोग है। उत्सर्जन के आधार पर लोहा, स्टील, सीमेंट, एल्युमीनियम और उर्वरक जैसे यूरोप में किए जाने वाले आयातों पर कर लगाता है। रिपोर्ट के अनुसार हालांकि यूरोपीय यूनियन का उद्देश्य इसकी मदद से कड़े उत्सर्जन नियमों का पालन करने वाली अपनी कंपनियों के लिए प्रतिस्पर्धा का समान अवसर पैदा करना है, लेकिन इसकी निष्पक्षता और व्यापक प्रभावों को लेकर वैश्विक जगत गंभीर रूप से चिंतित है। रिपोर्ट में कहा गया है कि सीबीएएम से विकासशील देशों को कहीं ज्यादा नुकसान हो सकता है। देखा जाए तो कई देश अभी भी अपने विकास के शुरूआती चरणों में हैं। ऐसे में आशंका है कि इस कर की वजह से उनके लिए अपने प्रमुख उद्योगों को विकसित करना कठिन हो जाएगा, जो उनके आर्थिक विकास और वैश्विक बाजार तक उनकी पहुंच में बाधा उत्पन्न कर सकता है।

विकासशील देशों के विकास की राह में रोड़ा है यह कर- इस तंत्र ने जहां उत्सर्जन कम करने का बोझ विकासशील देशों पर डाल दिया है, भले ही जलवायु परिवर्तन को पैर पसारने में सबसे ज्यादा मदद विकसित देशों ने की है। इसके बावजूद यह देश असंगत रूप से अपने द्वारा पैदा की हुई समस्या का बोझ विकासशील देशों पर डाल रहे हैं। इन विकसित देशों की जिम्मेवारी थी वो जलवायु न्याय को ध्यान में रखते हुए विकासशील देशों को भी आगे बढ़ने का मौका दें, लेकिन उत्सर्जन कम करने में विकसित देश जिस तरह विकासशील देशों की मदद करने में विफल रहे हैं, इस तंत्र में उनकी पिछली विफलताओं को भी अनदेखा कर दिया गया है। नतीजतन, 2023 में कॉप 28 के दौरान विकासशील देशों ने इस बात पर गहरी चिंता व्यक्त की कि कैसे सीबीएएम जैसे व्यापारिक नियम उनकी अर्थव्यवस्थाओं को नुकसान पहुंचा सकते हैं। वेबिनार का उद्घाटन करते हुए, सीएसई की महानिदेशक सुनीता नारायण ने कहा कि, व्यापार और जलवायु आंतरिक रूप से जुड़े हुए हैं, और जलवायु जोखिम से जूझ रही दुनिया में वैश्विक व्यापारिक नियमों में आमूलचूल बदलाव की आवश्यकता है, लेकिन यह बदलाव जलवायु न्याय की कीमत पर नहीं होना चाहिए। उनके मुताबिक सीबीएएम जैसे उपाय एकतरफा हैं। यह बोझ विकासशील देशों पर शिफ्ट कर रहे हैं, भले ही अब तक विकसित देशों ने अपने उत्सर्जन को पर्याप्त रूप से कम नहीं किया है। यह विकसित देश अभी भी कार्बन स्पेस पर कब्जा जमाए हुए हैं। यह विशेष रूप से चिंताजनक है क्योंकि इस तरह के उपाय दक्षिण में देशों की अर्थव्यवस्थाओं को और ज्यादा नुकसान पहुंचा सकते हैं, जिससे उनकी उत्सर्जन कम करने की क्षमता सीमित हो सकती है। देखा जाए तो सीबीएएम का उद्देश्य यूरोपीय यूनियन की कंपनियों को उन प्रतिस्पर्धियों से बचाना है, जहां कार्बन मूल्य तय नहीं किया गया है, इससे उनके उत्पाद सस्ते हो जाते हैं। हालांकि यूरोपियन यूनियन का मानना है कि यह कर उसके व्यापारिक साझेदारों को अपने निर्माण उद्योगों को कार्बन मुक्त करने के लिए प्रोत्साहित करेगा।

सीएसई रिपोर्ट पेश करते हुए अवंतिका गोस्वामी ने कहा, विकसित देश अपने आर्थिक विकास के लिए ऐतिहासिक रूप से जीवाश्म ईंधन पर निर्भर रहे हैं। हालांकि आज, उनके पास अपने घरेलू उत्सर्जन को काफी हद तक कम करने की क्षमता मौजूद है और साथ ही उनके पास वो तकनीकी मौजूद हैं जिनकी मदद से वो अपने निर्माण सम्बन्धी उत्सर्जन को कम कर सकते हैं। इसके बावजूद, वे उत्सर्जन जारी रखे हुए हैं। उन्होंने बहुत ज्यादा उत्सर्जन करने वाले उत्पादन को विकासशील देशों में स्थानांतरित कर दिया है। वहीं दूसरी ओर इस बीच, विकासशील देशों को सीबीएएम जैसे कर लगाकर अनुचित रूप से दंडित किया जा रहा है, जो उनकी वर्तमान वास्तविकता को आकार देने वाली ऐतिहासिक चुनौतियों पर विचार नहीं करता है। गोस्वामी ने आगे बताया कि, सीबीएएम इस तथ्य को भी नजरअंदाज करता है कि समृद्ध देशों ने पर्यावरण अनुकूल तकनीकों को विकासशील देशों के लिए सुलभ बनाने के अपने वादों को पूरा नहीं किया है। इसके बावजूद विकासशील देशों से अपेक्षा की जाती है कि वे सीबीएएम से बचने के लिए अपने उत्सर्जन को कम करने के लिए स्वयं भुगतान करें।

यह तब है जब पेरिस समझौता विकसित देशों से उनके जलवायु प्रयासों में विकासशील देशों का वित्तीय और तकनीकी रूप से समर्थन करने का आह्वान करता है। इस तरह सीबीएएम पेरिस समझौते और यूएनएफसीसीसी में निहित %सामान्य लेकिन विभेदित जिम्मेदारियों (सीबीडीआर)% के सिद्धांत का भी उल्लंघन करता है।

भारत के लिए क्या हैं सीबीएएम के मायने?

इस बारे में यूएनसीटीएडी से जुड़ी क्लाउडिया कॉन्ट्रेरास का कहना है कि, सीबीएएम जैसी नीतियों को पेरिस समझौते के अनुरूप होना चाहिए और इस बात पर विचार करना चाहिए कि क्या अन्य देश इसकी आवश्यकताओं को पूरा करने की क्षमता रखते हैं। कुछ देशों के लिए, व्यापार उनके राजस्व का एक प्रमुख स्रोत है, और ये नीतियां उत्सर्जन कम करने के उनके संसाधनों को सीमित कर सकती हैं। ऐसे में यह महत्वपूर्ण है कि ऐसे उपायों को लागू करने वाले देश प्रभावित देशों का समर्थन करें।

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक सोनल मेहता केलिए प्रतीक्षा ग्राफिक्स, 127 देवी अहिल्या मार्ग, इंदौर (म.प्र.) से मुद्रित एवं 209-बी शहनाई रेसीडेंसी-2 कनाड़िया रोड इंदौर (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक: डॉ. सोनल मेहता फोन : 0731-2595008 Mail.sonal12mehta@yahoo.co.in 9755040008